भारतीय चित्रकला में प्रयुक्त प्रतीक एवं उनके अर्थ

अमित कुमार,
शोधार्थी, चित्रकला विभाग
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय माधवपुरम, मेरठ
ईमेलः amitk529298@gmail.com

प्रो0 उमाशंकर प्रसाद
चित्रकला विभाग
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय माधवपुरम, मेरठ

Reference to this paper should be made as follows:

अमित कुमार,
प्रो0 उमाशंकर प्रसाद

भारतीय चित्रकला में प्रयुक्त प्रतीक एवं उनके अर्थ

Artistic Narration 2022,
Vol. XIII, No. 2,
Article No. 25 pp. 166-170

https://anubooks.com/journal-volume/artistic-narration-2022-vol-xiii-no2

सारांश

भारतीय चित्रकला आरम्भ से ही प्रतीकों के रूप में प्रदर्शित होती रही है। मानव के जन्म के समय से ही चित्रकला में प्रतीकों का विभिन्न रूपों में प्रचलन हो गया था। प्रागैतिहासिक काल में मानव ने प्रतीकात्मक चित्रण के विभिन्न रूप दुनिया के सामने प्रदर्शित किये। पुरातन काल में ही ओम तथा स्वास्तिक का प्रतीकात्मक रूप प्रदर्शित किया गया व उनकी पूजा की गयी। विभिन्न पशु, पक्षियों, जन–साधारण, आखेट दृश्यों, पेड़–पौधों आदि का प्रतीकात्मक अंकन मानव द्वारा प्रागैतिहासिक काल में किया गया। इसके बाद सिंधु घाटी की कला में भी प्रतीकात्मक मोहरें व वस्तुएँ पायी गयी। सिंधु घाटी सभ्यता में भी मानव ने अपनी अद्भुत कला प्रदर्शित की है। यह कला भी एक प्रतीकात्मक रुप है। सिन्धु घाटी सभ्यता के बाद भारतीय लघु चित्रकला अथवा मुगल शैली, राजस्थानी शैली व पहाड़ी शैली के अन्तर्गत भी मनुष्य ने बहुत ही सुन्दर–सुन्दर प्रतीकात्मक चित्रण प्रस्तुत किये। लघु चित्रकला के साथ–साथ भित्ति चित्रकला, खासतौर से अजन्ता की चित्रकला के अन्तर्गत भी विभिन्न प्रतीकात्मक चित्र बने हैं। लघु शैलियों के उपरान्त पटना शैली अर्थात् आधुनिक शैली में भी बखूबी रूप से प्रतीक चित्रण हुआ। पटना या कम्पनी शैली के साथ–साथ बंगाल शैली और आधुनिक शैली में विभिन्न कलाकारों ने नए–नए विषयों व शैलियों के अन्तर्गत प्रतीक चित्रों का निर्माण किया। प्रतीक चित्रों में विभिन्न पशु पक्षियों जैसे–घोड़ा, हाथी, गेंड़ा, गाय, हिरन, कबूतर, हंस, मोर, तोता और बत्तख आदि का बहुत ही आकर्षक चित्रण विभिन्न कालों में मनुष्य ने किया है। प्रतीक चित्रण में ही जीवन की विभिन्न परिस्थितियों व क्रियाओं जैसे–सुख, दुख, प्रेम, घृणा, आरोह, अवरोह, आकर्षकता आदि को चित्रित किया गया है।

प्रस्तावना

मनुष्य अपने आरम्भिक जीवन से ही प्रतीक चित्रण द्वारा अपनी भावनाओं को चित्रित करता रहा है। हमारी चित्रकला के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के प्रतीकों द्वारा विभिन्न प्रकार के विषयों को चित्रित किया गया है। **''मानव ने इन चित्रों में रेखाओं और आकारों द्वारा अपनी आत्मा एवं प्रगति को अंकित किया है।''**[1] हमारी चित्रकला के विभिन्न रूपों को अलग–अलग प्रकार से प्रतीकात्मक ढंग से कलाकारों ने प्रस्तुत किया है। ऐसा माना जाता है कि जब प्रतीक बनाया जाता है तो वह किसी वस्तु या स्थान आदि का बोध कराता है। भारतीय चित्रकला के सभी कालों में प्रतीकों की बहुलता रही है। पुरातन समय में ओम तथा स्वास्तिक का प्रतीकात्मक रुप प्रदर्शित किया गया व उनकी पूजा की गई। ओम की महिमा भारत ही नहीं अपितु अन्य देशों में भी प्रसिद्धि का पात्र है। ओम एक अपरम्पार शक्ति का प्रतीक माना गया है। ओम को विश्व का श्रेष्ठतम प्रतीक व अत्यधिक गंभीर अर्थ वाला प्रतीक माना गया है। अतः ओम की शक्ति व महिमा अपरम्पार है। **(चित्र सं०–1)** प्रतीकों के द्वारा कोई भी कलाकार जीवन की परिवर्तनशीलता, आकर्षकता, सुख, दुख, प्रेम, घृणा, आरोह व जिज्ञासा आदि की अभिव्यक्ति करता है। वह प्रतीकात्मक रूपों के माध्यम से अपने भावों को समाज के सामने प्रस्तुत करता है। **'प्रतीक'** शब्द के विभिन्न अर्थो को स्पष्ट करने हेतु उसके समानान्तर प्रयुक्त होने वाले कुछ अन्य दूसरे शब्द जैसे–बिम्ब, संकेत एवं चिहन होते हैं। ये शब्द भी प्रतीक के समान अर्थो को व्याख्यायित करते हैं।

''प्रतीक को समझने के लिए धार्मिक संस्कार की आवश्यकता होती है।''[2] प्रतीकों के कारण ही भारतीय चित्रकला पूरे विश्व में एक उत्कृष्ट स्थान पा सकी है। प्रतीक को गुण अथवा आर्थिक महत्व वाला संकेत भी कहा जाता है। प्रतीक द्वारा ही मानव विभिन्न रूपों व भावनाओं को दुनिया के सामने प्रस्तुत करता है। प्रतीकात्मक चित्रकला मनुष्य ने प्रागैतिहासिक चित्रकला से आरम्भ करके आधुनिक युग तक चित्रित की थी। प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य ने गुफाओं में व शिलाओं पर अपने विचार प्रतीकों के रुप में उकेरे। प्रागैतिहासिक के बाद सिन्धु घाटी सभ्यता और लघु चित्रकला जैसे–पाल, मुगल राजस्थानी व पहाड़ी शैलियों में भी भरपूर प्रतीकात्मक चित्र बने हैं। प्रागैतिहासिक काल में मानव इतना विकसित नहीं था। **''तान्त्रिक कला में आत्मिक विकास और चेतना के प्रसार का सशक्त प्रतीक पद्म को माना गया है।''**[3] प्राचीन समय में ओम, श्रीगणेश जी कलश व विभिन्न देवी देवताओं की चित्रलिपियाँ कलाकारों ने प्रतीकात्मक अर्थों के रूप में चित्रित की थी। ये कलात्मक रूप या चित्र भारतीय कलाकारों की भावनाओं, विकास और बुद्धि के आधार पर चित्रित किये गये थे। ओम को ब्रह्मा या विश्व शक्ति के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया था। ओम को सारे विश्व की परम शक्ति माना गया। उसके अनुरूप ही स्वास्तिक को मांगलिक व शुभ संकेत के रूप में माना गया था। स्वास्तिक भी ओम की तरह गंभीर तथा गूढ़ अर्थ वाला हैं स्वास्तिक शब्द के अनेकों अर्थ हैं। स्वास्तिक का अर्थ चतुपृथ या चौराहा भी लिखा गया है। इसमें स्वास्तिक चार रास्तों का प्रतीक माना गया है। मानव समाज ने स्वास्तिक को कल्याण का प्रतीक माना है। **(चित्र सं० 2)** इसी प्रकार से अगर गणेश जी की बात करें तो वे भी शुभ शक्ति का प्रतीक माने गये। गणेश जी का चित्रण व पूजा भी दूर–दराज देश प्रदशों में पुरातन समय से चली आ रही है। उनकी पूजा के भी साक्ष्य बहुत अधिक मिले हैं। आरम्भ में प्रागैतिहासिक काल के अन्तर्गत की गई कला में आखेट, लोक चित्र व पशु पक्षियों आदि जैसे–घोड़ा, गाय, हाथी, हिरन मोर व कबूतर आदि के प्रतीकात्मक चित्र मिले हैं। ये चित्र विभिन्न अर्थों को प्रदर्शित करते हैं। इन चित्रों में 'कबूतर' का चित्र प्रतीक प्रेम प्रतीक के रूप में माना जाता है। प्रागैतिहासिक कला के बाद सिन्धु सभ्यता में पाई गई मोहरों व बर्तनों पर 'योगी शिव', सूर्य आदि शक्ति का प्रतीक माने गए। **''पुरातत्व– वेत्ताओं ने इस सभ्यता को 'मृण्य पात्रों' की सभ्यता के नाम से पुकारा है।''**[4] वैदिक काल के अन्तर्गत चन्द्रमा, सूर्य, गणपति, अर्द्धनारीश्वर, विष्णु आदि शक्ति व पूज्य सम्मान का प्रतीक माने गए हैं। सिन्धु घाटी के बाद बौद्ध धर्म की कला या भित्ति परम्परा में भी अनेक देवी देवताओं व दृश्यों को धार्मिक चित्रण के रूप में दर्शाया गया है।

'श्री लक्ष्मी' जी का चित्रण धन देवी के प्रतीक चित्रण में किया गया है। इसके अलावा वैभव व समृद्धि का प्रतीक भी 'श्री लक्ष्मी' को माना गया है। 'सूर्य' और 'चन्द्रमा' को भी वैदिक काल में शक्ति के रूप में प्रतीकात्मक चित्रण हुआ। 'सूर्य व चन्द्रमा' को एक शक्ति प्रतीक के रुप में माना गया है। इनकी पूजा भी की जाती है। सूर्य व चन्द्रमा अपने तेज व प्रकाश द्वारा भी समूचे विश्व को प्रकाशित करते हैं। ये एक परम शक्ति के रुप में पूजे गए हैं। **(चित्र सं० 3)** इसके अलावा सूर्य–चन्द्रमा की पूजा भी उस समय में होती थी। 'समुद्र' का चित्रण या अर्थ भी पुरातन समय में ऐसा बताया गया है कि समस्त सृष्टि 'समुद्र' में लीन रहती है। अर्थात 'समुद्र' को गहराई का प्रतीक माना गया है। मनुष्य ने अपने जीवन में सुख का आभास करने के लिये व सुखी रहने के लिए विभिन्न प्रतीकात्मक वस्तुओं का निर्माण किया है।

मनुष्य का मानना है कि यदि किसी वस्तु को सूक्ष्म रूप में ही प्रदर्शित किया जाए तो विस्तृत रूप की जरूरत ही न पड़े। इसी के आधार पर समाज का निर्माण माना जाता है। अपने विचार मनुष्य ने दूसरो के सामने व्यक्त करने के लिए प्रतीक चित्रण का आरम्भ से ही इस्तेमाल किया। तभी से मानव ने प्रतीकात्मक कला समाज के सामने प्रस्तुत की थी। 'कमल' या 'पुष्कर' का प्रतीकात्मक प्रयोग भी भारत की चित्रकला में बखूबी हुआ है। 'कमल' का प्रयोग 'चित्रकला', 'मूर्तिकला' तथा 'स्थापत्यकला' तीनों कलाओं के अन्तर्गत हुआ है। सृष्टि के रचयिता का जन्म कमल से हुआ माना जाता है। पद्म 'कमल' सृष्टि का प्रतीक माना जाता है। कमल के विकसित रूप भरहुत स्तूप, सांची स्तूप व अमरावती स्तूपों पर पाए गए हैं। इन स्तूपों पर बौद्ध धर्म की कला का विस्तार है। यह कला भी दुनिया की सुन्तरतम कलाओं में से एक मानी जाती है। ''वैदिक मान्यता में जो स्थान हिरण्यगर्भ का था वही भागवत दर्शन में पद्म का है।''[5]

क्रास (+) व धन (+) चिन्ह या प्रतीक अधिकांश बरखेड़ा और खरवाई से प्राप्त माने जाते हैं। इन्हीं प्रतीकों का बदला हुआ रूप स्वास्तिक भारतीय चित्रकला में मंगल रूप प्रतीक माना गया है। स्वास्तिक तथा ओम प्रतीकों को आज के आधुनिक समय में पूजा जाता है और धार्मिक कार्यों में चित्रित किया जाता है। स्वास्तिक प्रतीक को मानव कल्याण का प्रतीक माना जाता है। 'स्वास्तिक' प्रतीक को विश्व का सर्वाधिक मांगलिक प्रतीक माना जाता है। वृक्षों की चित्रकला भी प्रतीकात्मक या धार्मिक रुपों में बखूबी की गई है। ''वृक्षो की पूजा आदि काल से होती चली आ रही है।''[6] चम्बल की घाटी के अर्न्तगत भी वृक्षों का प्रतीकात्मक चित्रण प्राप्त होता है। हड़प्पा व मोहनजोदड़ो से भी यह जानकारी प्राप्त होती है कि सन्धु सभ्यता के लोग वृक्षों की पूजा किया करते थे। सिन्धु सभ्यता से प्राप्त सीलों से यह जानकारी प्राप्त होती है कि विभिन्न प्रकार के वृक्षों का प्रतीकात्मक रूव व आकल्पनात्मक रुप उस सभ्यता में पाया गया है। उस समय के एक पुरातन चित्र में मानव के शरीर को प्राणों के वृक्ष के रूप में दिखाया गया है। अतः वह वृक्ष प्राण प्रतीक माना गया हैं। इनके अन्तर्गत कल्पवृक्ष, पुण्डरीक, हिरण्यस्त्रक, पुष्कर स्त्रज और कल्पलता आदि वृक्ष–वनस्पति तथा पुष्प–पौधे प्रतीकात्मक रुप में चित्रित हैं। इसके अलावा चक्र प्रतीक भी एक अनूठा महत्व रखता है। भारत के विविध पक्षी जीवन का मंत्र रुप चक्र ही माना जाता है। हमारे जीवन का जन्म तथा मृत्यु का आना जाना ही आवागमन चक्र माना गया है। इसकी गति अस्थिर व गतिमान है। चक्र भी एक मांगलिक प्रतीक के रुप में माना गया है। **(चित्र सं० 4)**

सामाजिक व धार्मिक क्षेत्रों में भी प्रतीकात्मक काला ने बहुत ख्याति अर्जित की है। यह पहले भी बताया जा चुका है कि धार्मिक संस्कारों व पूजा पाठों में प्रतीक कलाओं, उनकी विशेषताओं व प्रतीकों को समाहित किया जाता है। निराकार भगवान ईश का नाम तथा उसकी प्रतिमा उसका प्रतीक है। हंस पक्षी ब्रह्मा की उत्पत्ति मानी जाता है। त्रिशूल, नंदी या बैल, डमरु, अर्द्धचन्द्र भगवान शिव के प्रतीक माने जाते हैं। गदा, शंख, चक्र, गरूड़ भगवान विष्णु के प्रतीक माने जाते हैं। वैदिक और पौराणिक कथा कहानियों में प्रयुक्त

प्रतीक भी अलग–अलग प्रकार के अर्थों में जाने जाते हैं। इसी प्रकार से संस्कारों का भी प्रतीकात्मक रूप व महत्व है। चौथी शताब्दी से आरम्भ होकर सातवीं शताब्दी तक के समय को गुप्त काल के नाम से जाना जाता है। ''इन भित्ति चित्रों का विस्तार भारत में सर्वत्र मिलता है।''[7] इस परम्परा के अन्तर्गत अजन्ता, बाघ, बादामी, एलोरा और सित्तनवासल आदि गुहा चित्रों का समावेश पाया जाता है, जो कि प्रतीकात्मक संयोजन लिये हुए हैं। गुप्तकाल तथा मध्यकाल की कला में विभिन्न प्रसिद्ध पुस्तकों की भी रचना एवं पुनरावृत्ति हुई है। उनमें भी विभिन्न प्रतीकात्मक चित्र हैं। भारतीय कला प्रतीकों के अन्तर्गत कलश भी एक महत्वपूर्ण प्रतीकों में से एक है। भारत के कलाकारों ने कलश का उपयोग भी अपनी कला में बखूबी किया है। जैसे–लक्ष्मी जी के आसन के रुप में व स्तम्भों के शीर्षों के रुप में तथा हाथी से अभिसिंचित के रुप में भी कलश का बखूबी प्रतीकात्मक चित्रण किया है। **(चित्र सं० 5)** कबूतर पक्षी को भारतीय कला में प्रेम का प्रतीक माना गया है। उसे देखकर यही अर्थ निलकता है कि कोई प्रेम का प्रतीक सामने उपस्थित है।

खजुराहो तथा कोणार्क की कला का प्रत्येक मिथुन एक अत्युत्कृष्ट कलाकृति के रूप में देखा जाता है। उन मूर्तियों में लयात्मकता, तरंगित अंग व गत्यात्मकता देखी जाती है। कला जगत में धार्मिक प्रतीक कला प्रतीकों से असमान होते हुए भी एक गहनता लिये हुये होते हैं। मीन या मीन मिथुन भारतीय जीवन में युग–युगान्तर से एक प्रसिद्ध व प्रतिष्ठित प्रतीक चित्रण माना गया है। मीन–मिथुन प्रतीक सौभाग्य, शोभा एवं सर्जन के लिए चित्रित किये गये है। **(चित्र सं० 6)** 'चक्र' प्रतीक भी भारतीय कला में एक नई पहचान रखता है। चक्र हमारे जीवन के विकास और गतिशीलता का प्रतीक है। ''चक्र प्रतीक भारतीय जीवन का सार्वभौमिक अर्थ अभिव्यक्त करता है।''[8] इसकी गतिशीलता हमें निरन्तर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। यह प्रेरणा एक सकारात्मक दिशा तय करती है। अर्थात् चक्र भी भारतीय कला का एक सकारात्मक प्रतीक है। विभिन्न धर्म जैसे हिन्दू, बौद्ध, जैन तथा सिक्ख आदि में 'चक्र' की एक बहुत ही सकारात्मक व लयात्मक भूमिका रही है। इसी के साथ–साथ 'अनेकता में एकता' का पाठ पढ़ाने वाला प्रतीक चक्र से ज्यादा कोई नहीं हैं। जैन धर्म में यह बताया गया है कि किसी भी तीर्थकर को ज्ञान प्राप्त हो जाने के बाद धर्मचक्र के आगे–आगे चलना है। ''अन्ततः विश्व ही भगवान का यंत्र, है।''[9] महात्मा बुद्ध के द्वारा दिये गये प्रथम उपदेश को भी 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के नाम से जाना जाता है।

भारतीय कला के अन्तर्गत कलाकारों ने 'कलश' का भी बहुत ही अधिकता के साथ प्रतीकात्मक चित्रण किया है। हिन्दू मन्दिरों में कलश एक अद्वितीय स्थान रखता है। सांची, भरहुत, मथुरा, अमरावती और बोधगया आदि स्थानों के अन्दर व शिखरों पर कलश का सुन्दर निर्माण किया गया है। अतः भारतीय कला में कलश भी एक मांगलिक शिल्प अथवा प्रतीक है जिसने भारतीय कला की विशेषता को अत्यधिक प्रभावशाली बना दिया है। भारतीय लघु शैलियों व वास्तुकला के अन्तर्गत बहुत सी आकृतियों में नारी को मीन के साथ उत्कीर्ण किया गया है। अतः मीन के साथ मातृदेवी एक सुन्दर प्रतीकात्मक रुप को रचित करती हैं। मेसोपोटामिया की कला में इसको सृष्टि पूजा के नाम से जाना गया था। इसके साथ–साथ मिथुन का भी एक अद्भुत अर्थ व प्रतीकात्मक विशेषता है, जो भारतीय चित्रकला का एक सकारात्मक पहलु है। ''मिथुन इसीलिए सौभाग्य का प्रतीक है।''[10]

भारतीय चित्रकला में 'शालभन्जिका' भी एक अद्भुत विषय है। 'शाल– भन्जिका' किसी वृक्ष के नीचे खड़ी एक रुपसी तरुणी को कहा जाता है, जो त्रिभंग मुद्रा में हो। शालभंजिका कला प्रतीक व मूर्तियों के अंग प्रत्यंगों को कलाकारों ने बहुत मनोयोग से रचित किया है। शालभंजिका अपने अलंकृत केशों, मोहक मुद्राओं, त्रिभंग भंगिमाओं तथा आकर्षक आभूषणों से देखने वाले के मन को बरबस ही मोह लेती है। शालभंजिका की कला प्रायः स्तूपों के तोरणों की कड़ियों या चारों और की वेदिका स्तम्भों पर पायी गयी है। इसीलिये उन्हें

तोरण शालभन्जिकाएँ कहा जाता है। ''परम्परागत भारतीय दृष्टि कहती है कि कला नैतिक कर्म है।''[11] हमारी भारतीय कला में तान्त्रिक काल के अन्तर्गत भी प्रकीतात्मक चित्रण हुआ है तथा विभिन्न प्रतीकों को रचित किया गया है। तान्त्रिक कला में अप्सराओं ओर नायिकाओं के चित्र तथा विश्व मोहिनी महामाया के चित्र प्रतीकात्मक रूप में बखूबी चित्रित हुए हैं व इनको प्रकाशित किया गया है। इन्हीं प्रतीकों के माध्यम से भारतीय कला व संस्कृति गतिशील व विविध हो जाती है। भारत की समस्त कलाओं में प्रतीक चित्रण छुपा हुआ है। इस चित्रण में सूक्ष्म रूप दिखाकर भी अपने आप में एक विशिष्ट व विस्तृत अर्थ समाविष्ट होता है। भारतीय प्रतीक चित्रण के इतिहास में श्रीवत्स भी एक महत्वपूर्ण चित्रण है। स्वास्तिक तथा श्रीवत्स हमारी संस्कृति के बहुत ही मांगलिक चिन्ह हैं। श्रीवत्स भारतीय कला का ही नहीं बल्कि हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण प्रतीक माना गया है। श्रीवत्स लक्ष्मी का भी प्रतीक माना गया है। **(चित्र सं० 7)** विभिन्न कालों के अलावा विभिन्न धर्मों में भी भारत की चित्रकला में प्रतीकों का अद्भुत चित्रण है। विभिन्न भारतीय कला शैलियाँ प्रतीक चित्रण के अर्थ एवं विशेषताओं द्वारा अद्वितीय बनी। भारतीय कला में प्रतीकों का एक गतिशील एवं गहन अर्थ है, जो भारतीय कला में चार चाँद लगा देता है।

सन्दर्भ

1. प्रताप, डॉ० रीता, 2016 भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ०सं०–15।
2. वर्मा, श्री परिपूर्णानन्द, 1664, प्रतीक शास्त्र, हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उ०प्र० पृ०सं०–34।
3. मिश्र, डॉ० रवीन्द्र नाथ, 1987, तंत्र कला में प्रतीक कला प्रकाशन वाराणसी, पृ०सं०–34।
4. वर्मा, डॉ० अविनाश बहादुर, 2006, भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, पृ०सं०–20।
5. अग्रवाल, वासुदेव शरण, 1987, भारतीय कला, खण्डेलवाल आफसेटस, पृ०सं०–72।
6. चतुर्वेदी, डॉ० गोपाल मधुकर, 1989, भारतीय चित्रकला, साहित्य संगम इलाहाबाद, पृ०सं०–112।
7. प्रताप, डॉ० रीता, 2016, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ०सं०–57।
8. श्रीवास्तव, डॉ० ए०एल०, 1999, भारतीय कला प्रतीक, उमेश प्रकाशन इलाहाबाद, पृ०सं०–67।
9. वर्मा, श्री परिपूर्णानन्द, 1964, प्रतीक शास्त्र, हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उ०प्र०, पृ०सं०–75।
10. श्रीवास्तव, डॉ० ए०एल०, 1999, भारतीय कला प्रतीक, उमेश प्रकाशन इलाहाबाद, पृ०सं०–118।
11. समकालीन कला, ललित कला अकादमी, दिल्ली, अंक 46–47, पृ०सं०–1

चित्र संख्या 1

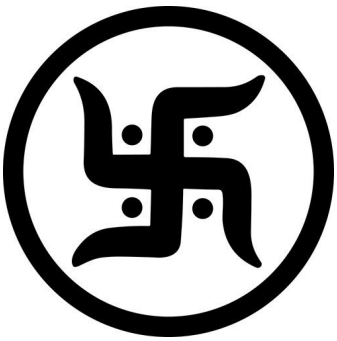

चित्र संख्या 2

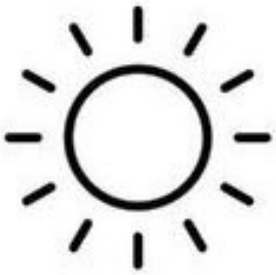

चित्र संख्या 3

चित्र संख्या 4

चित्र संख्या 5

चित्र संख्या 6

चित्र संख्या 7